उच्च कोटि की महिला थीं मंदोदरी

जगदीश प्रसाद शर्मा, फोन : 9311384212

रामकथा के प्रमुख पात्रों में से मंदोदरी एक महत्त्वपूर्ण पात्र होते हुये भी अधिक चर्चित नहीं हो सकीं। यहाँ उन्हीं चरित्रवान महिला की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करना इस लेख का उद्देश्य है –

मंदोदरी निस्संदेह उच्चकोटि की महिला थीं। वे एक सहृदया, संवेदनशील, सुशीला और संस्कारी नारी थीं। वे मय दानव की पुत्री और त्रिलोकविजयी लंकापति राक्षसराज रावण की धर्मपत्नी थीं। उनकी माता का नाम हेमा था। हेमा रूपवती और परम सुंदरी अप्सरा थीं। माता की तरह मंदोदरी भी बहुत सुंदर थीं और एक कुशल नर्तकी थीं। मंदोदरी में अद्भुत आकर्षक और उनका भव्य व्यक्तित्व था। सच्चरित्र, सरल स्वभाव, धर्मपरायणा, पतिव्रता आदि गुण होने के कारण ही उनकी पंच कन्याओं में गणना होती है। नित्य प्रातःकाल में उनके नाम (मंदोदरी) का स्मरण करने से महापातकों का नाश होता है –

अहिल्या द्रौपदी कुन्ती तारा मन्दोदरी तथा।
पंचकन्या स्मरेन्नित्यं महापातक नाशनम्॥

पुराणों के अनुसार मयराष्ट्र (वर्तमान में उत्तर प्रदेश के अन्तर्गत मेरठ नगर) मय दानव की राजधानी थी। मयराष्ट्र बनने से पूर्व यह विस्तृत मैदानी भाग था। दुर्गा सप्तशती के अनुसार भगवती दुर्गा ने यहीं महिषासुर का वध किया था। मेरठ में जहाँ आज भैंसाली बस अड्डा है, वह महिषासुर–वध के स्थल का स्मरण कराता है। जनश्रुति के अनुसार मेरठ में सदर बाजार के निकट बिल्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय में जो प्राचीन शिव मंदिर है, उस मंदिर में विवाह से पूर्व शिवभक्त मंदोदरी शिव की पूजा करती थीं। मंदोदरी का मायका होने से मयराष्ट्र रावण की ससुराल था।

जनश्रुति के अनुसार ही गाजियाबाद जिले के अन्तर्गत (वर्तमान के ग्रेटर नोएडा में) हिंडन नदी के निकट जहाँ विकास खंड बिसरख है, वहाँ प्राचीन काल में रावण के पिता विश्रवा मुनि का विशाल आश्रम था और गाजियाबाद के दूधेश्वरनाथ मंदिर में जो प्राचीन शिवलिंग है, उसकी विश्रवा मुनि पूजा करते थे। रावण की जन्मभूमि होने के कारण बिसरख मंदोदरी की ससुराल थी। **'मंदोदरी की जन्मभूमि और ससुराल'** प्राचीन इतिहास वेत्ताओं को शोध का विषय है।

बिसरख के लोग रावण को अपना पूर्वज, चारों वेदों का ज्ञाता, महाविद्वान, महान बलशाली, अजेय योद्धा, कुशल प्रशासक और भव्य व्यक्तित्वशाली के रूप में मानते हैं और बड़ी श्रद्धा–भक्ति से उसकी पूजा करते हैं, इसलिये बिसरख में आश्विन मास में दशहरा के दिन रावण का पुतला नहीं जलाया जाता। यही

नहीं, जैसे सनातन धर्मावलम्बियों के वाहनों पर दुर्घटना से बचने के लिये **'नमः शिवाय', 'जय माता दी'** आदि शब्द लिखे होते हैं, वैसे ही बिसरखवासियों के वाहनों पर **'रावण'** शब्द लिखा होता है। उनकी मान्यता है कि **'रावण'** लिखने से वाहन दुर्घटनाग्रस्त नहीं होता। वे रावण को अपना रक्षक मानते हैं।

रावण से मंदोदरी के विवाह की एक रोचक घटना है – एक दिन दानवराज मय अपनी अत्यंत रूपवती पुत्री के साथ जंगल में भ्रमण कर रहे थे। उस समय मंदोदरी की आयु पन्द्रह वर्ष की थी। वे ताजे खिले गुलाब की तरह सुंदर लग रही थीं। उसी जंगल में राक्षसराज रावण भी घूम रहे थे। उन्होंने जब मंदोदरी को देखा तो वे मंदोदरी के चुम्बकीय आकर्षण से बच नहीं पाये। रावण का मन बरबस ही मंदोदरी की ओर खिंचा चला गया या यों कहें कि मंदोदरी का अद्भुत सौंदर्य रावण के मन में समा गया, इसलिये रावण ने मंदोदरी से विवाह करने का निश्चय कर लिया। जब रावण ने दानवराज मय से उनकी पुत्री मंदोदरी का हाथ माँगा तो दानवराज सहर्ष तैयार हो गये और उन दोनों का विवाह करवा दिया। इस तरह मंदोदरी का विवाह सम्पन्न हुआ। राक्षसराज रावण की और भी अनेक पत्नियाँ थीं, पर वे सबसे अधिक पटरानी मंदोदरी को ही चाहते थे। मंदोदरी का ज्येष्ठ पुत्र इन्द्रजीत बड़ा मायावी, महावीर, कुशल योद्धा और समरजयी था।

मंदोदरी का स्वभाव रावण के स्वभाव से बिल्कुल विपरीत था। उन्होंने सीता–हरण का कभी समर्थन नहीं किया, अपितु उसे सदा गलत ही ठहराया। मयतनया मंदोदरी बुद्धिमती, समझदार और कर्तव्य–परायणा नारी थीं। पतिपरायणा पतिव्रता पत्नी का परम धर्म और कर्तव्य है कि वह अपने भटके पति को मधुर वाणी में प्रेम भरे वचनों से समझाकर सन्मार्ग पर लाये, इसलिये ही मंदोदरी ने अपना परम धर्म एवं कर्तव्य समझ कर अपने भटके प्राणनाथ लंकापति रावण को विनम्र मधुर वाणी में चार बार समझाने का भरसक प्रयास किया।

पहली बार मंदोदरी ने अपने प्राणनाथ रावण को तब समझाया था, जब रामदूत हनुमान समुद्र–लाँघ कर सीता माता के दर्शन करने के बाद राजवाटिका–विध्वंस, राक्षस–वध और लंका–दहन कर सकुशल लौट आये, तब मंदोदरी ने रावण को समझाने के ध्येय से कहा– हे प्राणनाथ! राम का एक दूत समुद्र लाँघ कर यहाँ आया, लंका की सुदृढ़ सुरक्षा व्यवस्था, जिसमें कोई परिंदा भी पर नहीं मार सकता था, को ध्वस्त कर लंका में घुस आया और लंका के रक्षकों को भनक तक न लगने दी। इतना ही नहीं, पूरी लंका को छान कर उसने सीता का पता लगा लिया और वाटिका के रक्षकों के रहते अशोक वाटिका उजाड़ दी। तुम्हारे लाखों राक्षसों को मौत के घाट उतार दिया। यहाँ तक कि तुम्हारे प्रियपुत्र अक्षय कुमार को मार डाला और तुम्हारे देखते देखते लंका को जला कर भस्म कर दिया। उस समय आपका बल, घमंड कहाँ चला गया था।

खैर, जो हुआ सो हुआ। अब भी अपनी भूल सुधार कर राम से वैर छोड़ कर उनकी पत्नी को लौटा कर लंका को विनाश होने से बचा लीजिये –

समुझत जासु दूत कइ करनी। स्रवहिं गर्भ रजनीचर घरनी।।
तासु नारि निज सचिव बोलाई। पठवहु कंत जो चहहु भलाई।।
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें।।

(5 ⁄ 36 ⁄ 7–8 एवं 10)

दूसरी बार मंदोदरी ने रावण को तब समझाया, जब श्रीराम द्वारा सागर पर पुल बाँधे जाने का समाचार सुनकर लंकापति रावण व्याकुल होकर दरबार से महल में आये, तब मंदोदरी ने बड़े ही प्रेम भरे वचनों से समझाया– हे नाथ! वैर उसी के साथ करना चाहिए, जिसे बल–बुद्धि में जीता जा सके। राम साधारण मानव नहीं हैं, वे साक्षात् भगवान हैं। भूमि का भार हरने के लिये उनका अवतार हुआ है, इन्हीं भावों की कविता–सुंदरी के रूप में एक झलक देखिये –

राम नहीं साधारण मानव वे अविनाशी परमेश्वर।
समझ रहे उनको वनवासी भूल तुम्हारी लंकेश्वर।।
राम सच्चिदानंदकंदघन जगन्नियंता करुणालय।
विश्वरूप वह अनल पवन नभ वही भूमि जल जीवालय।।

वे भू-भार हरण करने को राम रूप अवतरित हुये।
निज भक्तों की रक्षा करने दुष्ट जनों के काल हुये।।
ऐसा जग में कौन वीर जो उनके सम्मुख ठहर सके।
जो करता अपराध राम का राम-बाण से बच न सके।।

(सरल)

तीसरी बार तब समझाया जब अभिमानी रावण लंका के एक शिखर पर मंदोदरी के साथ बैठा नृत्यांगनाओं के नृत्य का आनन्द ले रहा था, तब अहंकारी रावण का अहंकार–भंग करने के लिये श्रीराम ने सहज ही एक बाण छोड़ कर रावण के छत्र–मुकुट और मंदोदरी के कर्णफूल (कुंडल) काट गिराये। यह चमत्कार कर रामबाण राम के तरकस में चला गया। रस में भंग पड़ने से वहाँ उपस्थित सभी राक्षस भयभीत हो गये, तब व्याकुल होकर मंदोदरी ने रावण को समझाया– हे प्राणनाथ! श्रीराम से विरोध छोड़ दीजिये। उन्हें मनुष्य जान कर हठ न कीजिये। सीता साधारण स्त्री नहीं है। वे जगज्जननी जगदम्बा हैं। वे सच्चिदानंद राम की शक्ति, संगिनी, सहचरी माया हैं। वे मूल प्रकृति हैं। हमारी जीवन–डोर उन्हीं के हाथों

में है। वही हमारी जीवन–नौका को भव–सागर के पार लगाती हैं। यदि आप अपना कल्याण चाहते हो तो प्रभु के चरण कमलों में जाकर अपने अपराधों की क्षमा माँग कर उन्हें सीता को लौटा दो। इन्हीं भावों को काव्य–शैली में देखिये –

साधारण युवती न जानकी जगज्जननि जगदम्बा हैं।
जग का कारण-कार्य सिया ही जगत-धुरी जग-खम्बा हैं।।
यही सच्चिदानंद राम की शक्ति-संगिनी कहलातीं।
माया मूल प्रकृति ईश्वर की भक्ति यही तो कहलातीं।।

जीवन-डोर इन्हीं के हाथों ये ही हमें नचाती हैं।
जीवन-नौका भव-सागर के ये ही पार लगाती हैं।।
यदि अपना कल्याण चाहते तो प्रभु के चरणों जाओ।
अपराधों की क्षमा माँग कर जगदम्बा को लौटाओ।।

(सरल)

चौथी बार तब समझाया जब बालिपुत्र अंगद का पैर लंका के किसी वीर से हिला तक नहीं, तब मंदोदरी ने समझाते हुये कहा – हे नाथ! जगन्नियंता राम से युद्ध करना आपको शोभा नहीं देता। जब उनके अनुज लक्ष्मण ने पंचवटी पर एक रेखा खींची थी, आप उसे पार नहीं कर सके। अब व्यर्थ गाल न बजा कर कुछ विचार कीजिए –

कंत समुझि मन तजहु कुमतिही। सोह न समर तुम्हहि रघुपतिही।।
रामानुज लघु रेख खचाई। सोउ नहिं नाघेहु असि मनुसाई।।
अब पति मृषा गाल जनि मारहु। मोर कहा कछु हृदयँ बिचारहु।।

(6/36/1–2 एवं 7)

मंदोदरी ने अपने प्राणनाथ लंकेश्वर को अनेक प्रकार से बहुत समझाया, परन्तु रावण अपने निश्चय से टस से मस न हुआ। आखिरकार वही हुआ, जिसकी आशंका थी। विधि के विधान को कौन बदल सकता है, परन्तु प्राणी का कर्तव्य है कि वह अपने कर्तव्य का पालन करे और अन्त तक प्रयासरत रहे। भगवान श्रीकृष्ण का अवतार भी भूभार–हरण के लिये हुआ था। इस कार्य के लिए उन्हें महाभारत युद्ध कराना था। वे हठी दुर्योधन का यह हठ भी सुन चुके थे कि वह बिना युद्ध के पांडवों को सूई की नोक के बराबर भी भूमि नहीं देगा, फिर भी वे स्वयं शान्ति प्रस्ताव लेकर हस्तिनापुर गये। भगवान श्री कृष्ण ने शान्ति–प्रयास कर लोक को यह शिक्षा दी कि लोक–मंगल का कार्य अवश्य करना चाहिए, भले ही उसमें सफलता न मिले, परन्तु शुभ कार्य का पुण्य अवश्य मिलता है। लोक मंगल के लिये प्रयास करना मानव–कर्त्तव्य भी है। यही विचार कर कर्तव्य–परायणा मंदोदरी ने अपने पत्नी धर्म को निभाने का भरसक प्रयास किया। उन धर्मपरायणाा प्रातः स्मरणीया देवी मंदोदरी को कोटि–कोटि नमन।

रूप सकहिं नहिं कहि श्रुति सेषा

डॉ0 भगवानदास पटैरया, महासचिव

अनंतकाल से चिदानंदमय जीव अपनी अस्मिता को भूलकर, माया के फंदे में फँसकर जन्म–मरण के चक्र में घूम रहा है। चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करते हुए उस परम प्रभु की असीम कृपा से इसे मानव देह प्राप्त होती है, पर बिरले ही उसका सदुपयोग करके अपना कल्याण कर पाते हैं। उस अखिल ब्रह्माण्ड नायक ईश्वर के अवतार लेने का यह भी एक विशेष कारण है कि उनके **''नाम-रूप-लीला-धाम''** साधन चतुष्ट्य में से किसी एक का सहारा लेकर अनंतकाल से बिछुड़ा जीव उन्हें प्राप्त कर ले।

इस लेख में ईश्वर के सगुण–साकार स्वरूप भगवान श्रीराम जी के **रूप** के संदर्भ में कुछ लिखने का प्रयास किया गया है। श्रीराम जी के रूप को जिन्होंने भी देखा, वह अपनी सुधि भूल गए। उनके रूप का वर्णन तो श्रुतियाँ और शेषनाग भी नहीं कर सकते, पर जिसने कभी स्वप्न में भी उस मोहिनी मूरत का दर्शन कर लिया हो वह कुछ समझ सकता है। गोस्वामी तुलसीदास जी लिखते है –

रूप सकहिं नहिं कहि श्रुति सेषा । सो जानइ सपनेहुँ जेहिं देखा।।

(1 / 199 / 12)

श्रीराम जी के रूप का दर्शन करके जो–जो भक्त कृतार्थ हुए, उनका अति संक्षिप्त विवरण श्रीरामचरितमानस के अनुसार इस प्रकार से है –

1. मनु–शतरूपा ने बहुत समय तक राज–पाट संभाला, पर इससे उन्हें विरक्ति हो गई कि सारा जीवन भगवत् भजन बिना चला गया। वे अपने पुत्र को बरबस राज–पाट सौंपकर सपत्नीक नैमिषारण्य गए और वहाँ पर उन्होंने उग्र तप किया, जिससे प्रसन्न होकर कई बार ब्रह्मा, विष्णु, महेश आए और वर माँगने को कहा, किन्तु वे तो उनके भी जनक अखिल ब्रह्माण्ड नायक के दर्शन करना चाहते थे। उनकी इस जिज्ञासा को भगवान ने पूर्ण किया और वे उनके समक्ष प्रकट हो गए। राजा–रानी उनकी अनुपम छवि को देखकर पलक बंद करना भूल गए –

भगत बछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना।।
भृकुटि बिलास जासु जग होई। राम बाम दिसि सीता सोई।।
छबिसमुद्र हरि रूप बिलोकी। एकटक रहे नयन पट रोकी।।
चितवहिं सादर रूप अनूपा। तृप्ति न मानहिं मनु सतरूपा।।

(1 / 146 / 8 तथा 1 / 148 / 4–6)

जब भगवान ने वर माँगने को कहा, तब उन्होंने उन्हीं को पुत्र रूप में माँग लिया और इस प्रकार से उन्होंने जीवन पर्यन्त (अगले जन्म में दशरथ–कौशिल्या के रूप में) उस रूप माधुरी का दर्शन किया और सारे जगत को भी उस अनुपम छवि का दर्शन कराया।

2. मुनि विश्वामित्र राक्षसों के आतंक से दुखी होकर उनके संहार हेतु महाराज दशरथ से श्रीराम–लक्ष्मण को माँगने जाते हैं और यह भी विचार करते जाते हैं कि इसी बहाने अखिल ब्रह्माण्ड नायक के सगुण स्वरूप का दर्शन करेंगे। वे श्रीराम जी के स्वरूप को देखकर अपनी देह की सुधि भूल गए –

पुनि चरननि मेले सुत चारी। राम देखि मुनि देह बिसारी।।

(1/207/5)

3. अपने यज्ञ को पूर्ण करके विश्वामित्र जी श्रीराम–लक्ष्मण के साथ जब महाराज जनक की नगरी पहुँचे, तब उनकी अगवानी के लिए महाराज जनक विप्र मंडली के साथ पहुँचे। सदैव ब्रह्मज्ञान में लीन रहने वाले, विदेह कहलाने वाले महाराज जनक श्रीराम जी की मोहिनी मूरत को देखकर वास्तव में विदेह हो गए अर्थात् अपनी देह की सुधि भूल गए –

मूरति मधुर मनोहर देखी। भयउ बिदेहु बिदेहु बिसेषी।।

(1/215/8)

4. विश्वामित्रजी से आज्ञा पाकर श्रीराम–लक्ष्मण जनकपुरी दर्शनार्थ जाते हैं। उनको देखने के लिए जनसमूह उमड़ पड़ता है। जो स्त्रियाँ बाहर नहीं निकल सकती थीं, वे खिड़कियों से ही श्रीराम जी के रूप को देखकर मोहित हो जाती हैं –

जुबतीं भवन झरोखन्हि लागी। निरखहिं राम रूप अनुरागीं।।
कहहिं परस्पर बचन सप्रीती। सखि इन्ह कोटि काम छबि जीती।।
सुर नर असुर नाग मुनि माहीं। सोभा असि कहुँ सुनिअति नाहीं।।
बिष्नु चारि भुज बिधि मुख चारी। बिकट बेष मुख पंच पुरारी।।
अपर देउ अस कोउ न आही। यह छबि सखी पटतरिअ जाही।।
कहहु सखी अस को तनुधारी। जो न मोह यह रूप निहारी।।

(1/220/4–8 तथा 1/221/1)

5. श्रीराम–लक्ष्मण मुनि विश्वामित्र की आज्ञानुसार पुष्प लेने जब पुष्प वाटिका जाते हैं, तब उसी समय सीताजी भी देवी पूजन के लिए पुष्प वाटिका में आयीं। एक सखी की सलाह पर सीताजी श्रीराम जी के दर्शन के लिए उस ओर जाती हैं, जहाँ पर श्रीराम जी पुष्प चुन रहे थे। उनके स्वरूप को देखकर सीताजी के नेत्र खुले ही रह गए –

थके नयन रघुपति छबि देखें। पलकन्हिहूँ परिहरीं निमेषें।।

(1/232/5)

6. धनुष भंग के पश्चात् परशुराम जी रौद्र रूप में जनकपुरी आते हैं। विश्वामित्र जी उनको श्रीराम–लक्ष्मण का परिचय कराते हैं। श्रीराम जी के अनुपम स्वरूप को देखकर उनके नेत्र चकित रह गए –

रामहि चितइ रहे थकि लोचन। रूप अपार मार मद मोचन।।

(1/269/8)

7. वनवास काल में श्रीराम जी महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में जाते हैं। श्रीराम जी उन्हें दण्डवत प्रणाम करते हैं और वे आशीर्वाद देते हैं। श्रीराम जी के मुखारविन्द की छवि देखकर वाल्मीकि जी के नेत्र तृप्ति को प्राप्त करते हैं –

देखि राम छबि नयन जुड़ाने। करि सनमानु आश्रमहिं आने।।

(2/125/2)

8. महर्षि वाल्मीकि की आज्ञानुसार श्रीराम जी जानकी जी और लक्ष्मण जी के साथ चित्रकूट जाते हैं। वहाँ पर आदिवासी कोल–भील सभी श्रीराम जी की छवि को देखकर अत्यंत अनुरागमय हो जाते हैं। वे दोना भर–भर कर कंद–मूल–फल भेंट में देते हुए बारम्बार प्रणाम करते हैं –

यह सुधि कोल किरातन्ह पाई। हरषे जनु नव निधि घर आई।।
कंद मूल फल भरि भरि दोना। चले रंक जनु लूटन सोना।।
करहिं जोहारु भेंट धरि आगें प्रभुहि बिलोकहिं अति अनुरागे।।

(2/135/1–2 तथा 5)

9. चित्रकूट प्रवास के पश्चात् श्रीराम जी वहाँ से अन्यत्र जाने का विचार करके अपनी कुटिया से निकल कर सर्वप्रथम अत्रि मुनि के आश्रम में जाते हैं। अत्रिजी तो चित्रकूट में कई बार श्रीराम जी का दर्शन कर चुके थे, किन्तु अपने आश्रम में आया देखकर अति निकट से उनके दर्शन करके उनके नेत्र तृप्त हो गए–

देखि राम छबि नयन जुड़ाने। सादर निज आश्रम तब आने।।

(3/3/7)

10. अत्रि मुनि के आश्रम से आगे चलकर श्रीराम जी अगस्त्य मुनि के शिष्य सुतीक्ष्ण जी के आश्रम के समीप जाते हैं। प्रभु राम के आने का समाचार सुनकर सुतीक्ष्ण जी ध्यानस्थ हो जाते हैं, तब श्रीराम जी उन्हें ध्यान में ही अपना चतुर्भुज रूप दिखाते हैं, जिसे देखकर वे अकुलाकर उठते हैं, क्योंकि वे तो श्रीराम जी का नर–रूप ही देखना चाहते थे। जैसे ही उनका ध्यान टूटा, श्रीराम जी उनके सम्मुख खड़े दिखाई दिए। वे श्रीराम जी का दर्शन करते हुए ऐसे लग रहे थे मानो किसी ने उनकी मूर्ति वहाँ खड़ी कर दी हो –

राम बदनु बिलोक मुनि ठाढ़ा। मानहुँ चित्र माझ लिखि काढ़ा।।

(3/10/24)

11. दण्डकारण्य के पंचवटी स्थल पर प्रवास के समय रावण की बहिन शूर्पणखा श्रीराम जी के रूप पर मोहित हो गई और सुन्दर वेश धारण करके उनसे विवाह का प्रस्ताव रखा। श्रीराम जी ने उसे लक्ष्मण जी के पास भेजा और वहाँ से फिर श्रीराम जी के पास आकर क्रोधित होकर सीताजी को डराने के उद्देश्य से भयंकर रूप धारण कर लेती है, तब श्रीराम जी से संकेत प्राप्त कर लक्ष्मण जी ने उसके नाक कान काट दिए। प्रतिशोध स्वरूप वह खर–दूषण के पास जाती है, जो राक्षस दल के साथ श्रीराम जी पर आक्रमण कर देते हैं, किन्तु श्रीराम जी की सुंदरता को देखकर वे कहते हैं –

प्रभु बिलोकि सर सकहिं न डारी। थकित भई रजनीचर धारी।।
सचिव बोलि बोले खर दूषन। यह कोउ नृपबालक नर भूषन।।
नाग असुर सुर नर मुनि जेते। देखे जिते हते हम केते।।
हम भरि जन्म सुनहु सब भाई। देखी नहिं असि सुंदरताई।।

(3 / 19 / 1–4)

12. सीताहरण के पश्चात भक्तिमती शबरी के परामर्श से श्रीराम जी सीतान्वेषण हेतु किष्किंधा पर्वत की ओर जाते हैं। बालि त्रास ग्रस्त सुग्रीव उन्हें देखकर भयभीत हो जाता है और श्री हनुमानजी को उनके बारे में पता लगाने को भेजता है। श्री हनुमानजी विप्र रूप में आकर वार्तालाप करते हैं और जब यह जान जाते हैं कि ये तो अखिल ब्रह्माण्ड नायक ब्रह्म का अवतार हैं, तब वे पुलकायमान शरीर से उनकी छवि देखते ही रह जाते हैं –

पुलकित तन मुख आव न बचना। देखत रुचिर बेष कै रचना।।

(4 / 2 / 6)

13. सीतान्वेषण के समय लंका में श्री हनुमानजी भक्त विभीषण से मिले और उन्हें श्रीराम जी के स्वरूप एवं स्वभाव का दर्शन कराया, इससे उन्हें अपने भाई रावण को सत्य बात बताने का साहस हुआ, किन्तु उन्हें लात मारकर भगा दिया गया। विभीषण श्रीराम जी की शरण में आते हैं। वे मार्ग में विचार कर रहे थे कि उन चरणों का दर्शन करूँगा, जिनके स्पर्श से अहिल्या का उद्धार हुआ, जो चरण दंडकवन को पावन करने वाले हैं, जो चरण जानकी जी ने हृदय में धारण किए हुए हैं, जो चरण कपटी मृग के पीछे दौड़े हैं, जो चरण कमल शिवजी के हृदय रूपी सरोवर में विराजते हैं और जिन चरणों की पादुकाओं में भरत जी का मन रमा हुआ है, किन्तु जब वे श्रीराम जी के पास आए, तब उनकी छवि देखकर वहीं अटक गए और टकटकी लगाकर देखते ही रह गए –

बहुरि राम छबिधाम बिलोकी। रहेउ ठटुकि एकटक पल रोकी।।

(5 / 45 / 3)

14. लंका में जिस समय रावण ने युद्ध का यह समाचार सुना कि लक्ष्मण जी की मूर्छा दूर हो गई अर्थात् मेघनाद का प्रहार असफल रहा, तब उसने भाई कुंभकर्ण को निद्राग्रस्त अवस्था से बहुत प्रयास करके जगाया और जागने पर सीताहरण से लेकर युद्ध तक का पूरा वृत्तांत सुनाया, जिसे सुनकर कुंभकर्ण

ने उसे धिक्कारा और कहा कि अब समय नहीं है मुझे भेंटो। अब मैं तो उस परम प्रभु के दर्शन करके नेत्रों को सफल करूँगा –

अब भरि अंक भेंटु मोहि भाई। लोचन सुफल करौं मैं जाई।।
स्याम गात सरसीरुह लोचन। देखौं जाइ ताप त्रय मोचन।।

(6/63/7–8)

15. वनवास काल की समाप्ति के पश्चात श्रीराम जी जब अयोध्या आए, तब सभी नगरवासी, जो उनके विरह में 14 वर्षों तक व्रत–साधना में लीन थे, अत्यंत हर्षित हुए। श्रीराम जी सभी से यथायोग्य मिले। राज्याभिषेक का समय आया तब श्रीराम जी ने आभूषण धारण किए। उनकी छवि को देखकर सैकड़ों कामदेव लज्जित हो रहे थे। इस स्वरूप को देखकर आज गुरु वसिष्ठ जी का भी मन अनुरागमय हो गया –

करि मज्जन प्रभु भूषन साजे। अंग अनंग देखि सत लाजे।।
प्रभु बिलोकि मुनि मन अनुरागा। तुरत दिब्य सिंघासन मागा।।

(7/11/8 तथा 7/12/1)

16. राज्याभिषेक के पश्चात् एक बार श्रीराम जी अपने भाइयों और हनुमान जी के साथ एक उपवन में गए, जहाँ पर सनकादिक ऋषि उनके दर्शनार्थ पधारे। चारों ऋषि श्रीराम जी की अतुलित छवि देखकर प्रेममग्न हो गए –

मुनि रघुपति छबि अतुल बिलोकी। भए मगन मन सके न रोकी।।
स्यामल गात सरोरुह लोचन। सुंदरता मंदिर भव मोचन।।
एकटक रहे निमेष न लावहिं। प्रभु कर जोरें सीस नवावहिं।।

(7/33/2–4)

17. जब श्रीराम जी महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में पधारे और उनसे पूछा कि वे कहाँ रहें ताकि किसी को कष्ट न हो, तब महर्षि ने व्यंग्यात्मक रूप से उन्हीं से पूछ लिया कि आप ही बताएं कि आप कहाँ नहीं हैं अर्थात् आप तो सर्वत्र विराजमान हैं, तथापि उन्होंने 14 भक्तों के मन हृदय को बताया जहाँ श्रीसीता–लक्ष्मण सहित वे निवास करें। उनमें से एक स्थान इस प्रकार से है –

लोचन चातक जिन्ह करि राखे। रहहिं दरस जलधर अभिलाषे।।
निदरहिं सरित सिंधु सर भारी। रूप बिंदु जल होंहि सुखारी।।
तिन्ह कें हृदय सदन सुखदायक। बसहु बंधु सिय सह रघुनायक।।

(2/128/6–8)

इस प्रकार से प्रभु रूप दर्शन नाम–रूप–लीला–धाम के अनुसार भक्ति का एक स्वरूप है और हम इसे अपना कर अर्थात् श्रीरामचरितमानस में वर्णित उपर्युक्त प्रसंगों तथा अन्य ऐसे ही प्रसंगों, जिनमें श्रीराम जी की अलौकिक छवि का वर्णन है, प्रभु श्रीराम की छवि का स्मरण करके अपने मानव जन्म को सफल और धन्य बना सकते हैं।

AVG LOGISTICS

A STEP AHEAD

AVG LOGISTICS LTD.

- Rail & Road Service
- Multi Axle Containers
- Cool Chain-Reefer Container
- Insulated Containers
- Trailier/Flat
- Open Body Truck
- Rail VP Service-AC/Dry
- Rake Clearance
- Warehouse Management
- Empty Container/Long Storage

Corp. Office : 102, Ist Floor, Jhilmil Metro Station Complex, Above State Bank of India, Delhi - 95
Tel : 011- 22124356, 8527906205
E mail : customersupport@avglogistics.com

Operations Office : 76F, Phase 4, Sector 56, Kundali Indutrial Area, Kundali, Sonepat   Mobile : 9810081839

FULL LOAD BOOKING ALL OVER INDIA

NAVI MUMBAI
Mallika Storage, Off. No. 206 Plot No. 14, Sec-19, Palm Beach Road, Vasi, Navi Mumbai-400705,
Cell : 9322630611, 9320070140
Email : mumbai@avglogistics.com

GUWAHATI
Kamrup Warehouse, Near Lal Godown
Opp. Central Jail, Lokhra, Guwahati-781034
Tel. : 0361-2738087, 08876053010, 8811092220
8619419996, 7670066610
Email :guwahati@avglogistics.com

HYDERABAD
Plot No2, Block No.4, Besides Namdhari Seeds,
Autonagar, Hyderabad- 500070
Ph : 08527000372
E mail : hyderabad@avglogistics.com

CHENNAI
No. 38, Suman Gali Nagar, Vadeperumpakkam,
Madhavaram, Chennai-600060
Mob. : 09840221313, chennai@avglogistics.com

GOA
G-1 & G-3, Vinayaki Appt. Opp. Fire Station
Warkhandem, Ponda, Goa-403401
Tel. : 0832-2319039, 07798985095, 7798985091
Email : ponda@avglogistics.com

KOLKATA
124, P.W.D. Road, (U.B.Colony)
Near Dunlop Bridge, 3bB Bus Stand
Kolkata - 700108
Cell : 9007898823

BANGALORE
No.11.2nd Floor. 3rd Cross, Behind VISL Building Sindhi Colony, J.C. Road,
Bangalore-560002
Phones : 7022009627, 7022009623
Email : sro.bangalore@avglogistics.com

मानस में नाम तत्त्व

कैलाश त्रिपाठी, आर्यनगर, औरैया (उ0प्र0) फोन : 9897939095

दशरथ–नन्दन श्रीराम साक्षात् ब्रह्म हैं। इस सत्यानुभूति को दृढ़ता एवं निष्ठा से प्रस्तुत करना श्रीरामचरितमानस का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। जिसे तात्विक रूप में यह अनुभव हो जायेगा कि श्रीराम ब्रह्म हैं, वह इस नश्वर शरीर को त्याग कर पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होगा, प्रत्युत प्रभु को प्राप्त हो जायेगा। इसमें सन्देह नहीं है। गीता के चतुर्थ अध्याय में भगवान अर्जुन से कहते हैं –

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥

(गीता 4/9)

अर्थात् हे अर्जुन! मेरे जन्म और कर्म दिव्य हैं। इस प्रकार (मेरे जन्म और कर्म को) जो मनुष्य तत्त्व से जान लेता है अर्थात् दृढ़तापूर्वक मान लेता है, आत्मानुभूति कर लेता है, वह शरीर का त्याग करके पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होता (प्रत्युत) मुझे प्राप्त होता है।

निज इच्छाँ प्रभु अवतरइ सुर महि गो द्विज लागि।
बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार॥

(मानस 4/26 एवं 1/192)

इस सत्य तथ्य की अनुभूति कराना ही श्रीरामचरितमानस की रचना का उद्देश्य और मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। अब प्रश्न यह है कि इसकी स्वानुभूति कैसे हो कि राम ब्रह्म हैं और उनके जन्म व कर्म दिव्य हैं। इसके लिए साधन रूप में मानस में है भगवान का नाम। भगवन्नाम स्मरण से सहज स्वतः अनुभव हो जाता है कि राम ब्रह्म हैं और उनके जन्म व कर्म दिव्य हैं। इस प्रकार कोई भी अत्यन्त सहज ही जीवन के परम लक्ष्य अर्थात् भगवान को प्राप्त हो सकता है। गोस्वामी जी स्वयं भगवन्नाम के द्वारा इसकी प्रत्यक्ष अनुभूति कर अपने जीवन को सार्थक कर चुके थे। उसी भगवन्नाम को साधन रूप में सर्वजन कल्याण के भाव से प्रतिपादित कर आत्मसुख का अनुभव करना ही 'मानस' रचना का विशिष्ट उद्देश्य तथा सहगामी प्रतिपाद्य विषय है।

'मानस' में भगवन्नाम की महत्ता की अभिव्यक्ति सूक्ष्म, स्थूल, प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष अन्यान्य रूपों में विभिन्न प्रकार से हुई है। गोस्वामी जी की दृष्टि में सभी मानव मान्य काव्यगत गुण स्थूल एवं लौकिक हैं, परन्तु राम नाम सूक्ष्म, चिन्मय, दिव्य, गुणातीत (सत् रज, तम से परे) और अनन्त गुणों वाला है –

अगुन अनूपम गुन निधान सो।

(1/19/2)

सभी काव्यगत गुणों से युक्त अपने काव्य को सभी गुणों से रहित कहने का तात्पर्य सूक्ष्म रूप से यही रहा है कि उसमें गुणातीत 'राम' और नाम का प्रतिपादन होने से उनका काव्य भी गुणातीत अर्थात् सत् रज तम भौतिक गुणों से रहित है, न कि काव्यगत गुणों से रहित।

तुलसीदास जी ने भगवान के नाम को उदार, अत्यन्त पवित्र, पुराण और श्रुतियों का सार, मंगल भवन एवं अमंगल का हरण करने वाला आदि अनन्त गुणों से युक्त मानते हुए राम नाम के समक्ष काव्य के भौतिक गुणों को विशेष महत्व नहीं दिया है। वे कहते हैं कि काव्यगत गुणों के अभाव में श्री राम नाम युक्त काव्य श्रेष्ठ है, न कि राम नाम रहित काव्यगत गुणों से युक्त काव्य। वे मानस में स्पष्ट लिखते हैं –

भनिति मोर सब गुन रहित बिस्व बिदित गुन एक।
सो बिचार सुनहहिं सुमति जिन्ह कें बिमल बिबेक।।

(1/9)

उनकी अपनी दृष्टि में विश्व विदित गुण केवल एक है –

एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा।।
मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी।।

(1/10/1–2)

वस्तुतः 'श्रुति सारा' शब्द यहाँ यह संकेत देता है कि भगवान का पावन नाम श्रीरामचरितमानस का भी सार तत्व है, जिसे गोस्वामी जी ने बालकाण्ड में 17 से 27 तक नौ दोहों की 72 चौपाइयों के अन्तर्गत नाम वन्दना में विभिन्न रूपों में व्याख्यायित किया है। यहाँ आलेखीय कलेवर में नाम वंदना की 72 चौपाइयों को उद्धृत न करते हुए कहना यह है कि गोस्वामी जी ने उसमें विभिन्न साक्ष्यों एवं उदाहरणों के साथ राम नाम को लौकिक (भौतिक) तथा पारमार्थिक (आध्यात्मिक) दोनों दृष्टियों से सर्वोत्तम साधन के रूप में प्रतिपादित किया है। यद्यपि 'रामचरितमानस' में **नाम, रूप, लीला एवं धाम** साधन चतुष्ट्य का सर्वांग समावेशित स्वरूप है, तथापि गोस्वामी जी ने नाम को सर्वोपरि सर्वोत्तम रूप में स्वीकारा है, नाम के आश्रय से यह स्वानुभूति सहज संभव है कि राम ब्रह्म हैं और उनके जन्म और कर्म दिव्य हैं –

ब्रह्मसुखहि अनुभवहिं अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा।।
जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ। नाम जीहँ जपि जानहिं तेऊ।।

(1/22/2–3)

नाम वन्दना के अतिरिक्त भी 'मानस' में सर्वत्र नाम के प्रति तुलसीदास जी की निष्ठा की अभिव्यक्ति नाना रूपों में हुई है। उनके द्वारा स्थान–स्थान पर नाम की महत्ता का प्रतिपादन विभिन्न रूपों में कराया

गया है। कतिपय संकेत दृष्टव्य हैं। भरद्वाज जी याज्ञवल्क्य जी से कहते हैं –

राम नाम कर अमित प्रभावा। संत पुरान उपनिषद गावा।।
संतत जपत संभु अबिनासी। सिव भगवान ग्यान गुन रासी।।

(1 / 46 / 2–3)

भगवान शंकर पार्वती से कहते हैं –

बिबसहुँ जासु नाम नर कहहीं। जनम अनेक रचित अघ दहहीं।।
सादर सुमिरन जे नर करहीं। भव बारिधि गोपद इव तरहीं।।

(1 / 119 / 3–4)

जब वही एक बात विभिन्न व्यक्तियों द्वारा पृथक–पृथक कही जाती है तो वह सहज स्वाभाविक रूप से विश्वास की परिधि में आ जाती है, अतएव तुलसी बाबा एक पात्र के कथन की पुष्टि अन्य पात्रों द्वारा अनवरत कराते रहते हैं ताकि किसी प्रकार का कोई संशय न रहे और विश्वास में दृढ़ता आये। किष्किन्धा काण्ड में संपाती कहते हैं –

पापिउ जा कर नाम सुमिरहीं। अति अपार भवसागर तरहीं।।

(4 / 29 / 3)

प्राकारान्तर से यही बात गीधराज जटायु भी कहते हैं –

जाकर नाम मरत मुख आवा। अधमउ मुकुत होइ श्रुति गावा।।

(3 / 31 / 6)

यही बात उत्तरकाण्ड में काकभुशुण्डि जी गरुड़ जी से इस प्रकार से कहते हैं –

सब भरोस तजि जो भज रामहि। प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहि।।
सोइ भव तर कछु संसय नाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं।।

(7 / 103 / 6–7)

कथनी और करनी में एक रूपता सहज नहीं है। सद्वृत्तियों या सदाचरण पर व्याख्यान देना जितना आसान है, उसका अनुकरण उतना ही कठिन। सद्वृत्तियों, सद्कर्मों या साधना के उपांगों आदि का प्रतिपादन करना एक अलग बात है और उनका आचरण या अनुकरण सर्वथा अलग। गोस्वामी जी ने मानस में इसका संकेत इस प्रकार किया है –

पर उपदेस कुसल बहुतेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे।।

(6 / 78 / 2)

यही कारण है कि तुलसीदास जी ने विभिन्न पात्रों द्वारा विभिन्न प्रसंगों में भगवन्नाम की महिमा का प्रतिपादन कराने के साथ अन्यान्य पात्रों द्वारा नैतिक जीवन की विभिन्न स्थितियों में भगवन्नाम का स्मरण करते रहना दर्शाया गया है। कुछेक उद्धरण अपेक्षित हैं, यथा –

(1) भगवान शंकर द्वारा नाम स्मरण –

राम नाम सिव सुमिरन लागे। जानेउ सतीं जगतपति जागे।।
जपहिं सदा रघुनायक नामा। जहँ तहँ सुनहिं राम गुन ग्रामा।।

(1/60/3 तथा 1/75/8)

(2) सती जी द्वारा नाम स्मरण –

कहि न जाइ कछु हृदय गलानी। मन महुँ रामहि सुमिर सयानी।।

(1/59/5)

(3) महाराज दशरथ जी द्वारा नाम स्मरण –

सुमिरि रामु गुरु आयसु पाई। चले महीपति संख बजाई।।
राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुबर बिरहँ राउ गयउ सुरधाम।।

(1/302/3 तथा 2/155)

(4) भरत जी द्वारा नाम स्मरण –

भरत तीसरे पहर कहँ कीन्ह प्रबेसु प्रयाग।
कहत राम सिय राम सिय उमगि उमगि अनुराग।।
जबहिं रामु कहि लेहिं उसासा। उमगत पेमु मनहुँ चहु पासा।।

(2/203 तथा 2/220/6)

(5) निषादराज गुह द्वारा नाम स्मरण –

बिगत बिषाद निषादपति सबहि बढ़ाइ उछाहु।
सुमिरि राम मागेउ तुरत तरकस धनुष सनाहु।।
सुमिरि राम पद पंकज पनहीं। भाथीं बाँधि चढ़ाइन्हि धनहीं।।

(2/190 तथा 2/191/4)

(6) विभीषण द्वारा राम नाम स्मरण –

राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा। हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा।।

(5/6/3)

(7) माँ जानकी द्वारा नाम स्मरण –

जेहि बिधि कपट कुरंग सँग धाइ चले श्रीराम।
सो छबि सीता राखि उर रटति रहति हरिनाम।।

(3/29 ख)

गोस्वामी तुलसीदास जी ने मानस में नाम महिमा का उल्लेख न केवल नाम वंदना और विभिन्न पात्रों के माध्यम से किया है, बल्कि स्वयं की निष्ठा और अनुभूतियों के रूप में भी नाम को विशेष महत्व प्रदान किया है। वे अपना अभिमत देते हुए कहते हैं –

कठिन काल मल कोस धर्म न ग्यान न जोग जप।
परिहरि सकल भरोस रामहि भजहिं ते चतुर नर।।
यह कलिकाल मलायतन मन करि देखु बिचार।
श्रीरघुनाथ नाम तजि नाहिन आन अधार।।

(3/6 ख तथा 6/121 ख)

भगवन्नाम में तुलसीदास की यह निष्ठा विनय पत्रिका के विभिन्न पदों में अतिशय प्रबल दिखायी देती है। कतिपय संकेत दृष्टव्य हैं –

नाहिंन आवत आन भरोसो।
यहि कलिकाल सकल साधनतरु है स्रम फलनि फरो सो।
तप, तीरथ, उपवास, दान, मख जेहि जो रुचै करो सो।
बहु मत मुनि बहु पंथ पुराननि जहाँ-तहाँ झगरो सो।
गुरु कह्यो राम भजन नीको मोहिं लगत राज-डगरो सो।

(पद संख्या/173)

पायेउँ नाम चारु चिंतामनि, उर तें न खसैहौं।

(पद संख्या/105)

मोको सुभदायक भरोसो राम-नाम को।।

(पद संख्या/178)

महाराज! केहू भाँति नाम-ओट लई।।
राम! नामको प्रताप जानियत नीके आप,
मोको गति दूसरी न बिधि निरमई।

(पद संख्या/252)

तुलसीदास जी की यह नाम निष्ठा शास्त्रोन्मुखी है। विभिन्न पुराणों में नाम को सर्वोत्तम साधन के रूप में रेखांकित किया गया है। कुछेक संकेत देखें –

राम रामेति ये नित्यं जपंति मनुजा भुवि।
तेषां मृत्यु भयादीनि न भवन्ति कदाचन।।

(अध्यात्म रामायण)

अर्थात् जो लोग नित्य प्रति राम–राम जपा करते हैं, उनको किसी समय मृत्युभय आदि नहीं होते। विष्णु पुराण में प्रह्लाद जी अपने पिता हिरण्यकशिपु से कहते हैं – हे तात! जिनके स्मरण मात्र से जन्म, जरा और मृत्यु आदि के समस्त भय दूर हो जाते हैं, उन सकल भयहारी अनन्त के हृदय में स्थित रहते मुझे भय कहाँ रह सकता है –

भयं भयानामपहारिणि स्थिते मनस्यनन्ते मम कुत्र तिष्ठति।
यस्मिन्स्मृते जन्मजरान्तकादिभयानि सर्वाण्यपर्यान्त तात।।

श्रीमद्भागवत के अनुसार घोर संसार बन्धन में पड़ा हुआ मनुष्य विवश होकर भी यदि भगवन्नाम का उच्चारण करता है तो वह तत्काल उस बन्धन से मुक्त हो जाता है और उस पद को प्राप्त हो जाता है जिससे भय स्वयं भय मानता है –

आपन्नः संसृति घोरा यन्नाम विवशे गृवन।
ततः सद्यो विमुच्येत् यद्विमेति स्वयं भयम्।।

स्कन्द पुराण के अनुसार हँसी में, भय से, द्वेष से अथवा स्नेह से पापी से पापी मनुष्य भी यदि एक बार श्रीहरि का पापहारी नाम उच्चारण कर लेते हैं तो वे भी भगवान के निरामय धाम में जा पहुँचते हैं –

हास्याद् भयात्तथा क्रोधा द्वेषात् कामादथापि वा।
स्नेहाद्वा सकृदुच्चार्य विष्णोर्नामाघ हारि च।।
पापिष्ठा अपति गच्छति विष्णोधाम निरामयम्।

श्रीरामचरितमानस में भी ऐसा ही उल्लेख है यथा –

भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ। नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ।।

(1/28/1)

इस प्रकार से यह स्पष्ट है कि 'रामचरितमानस' में सार तत्त्व के रूप में भगवन्नाम का नाना रूपों में प्रतिपादन करते हुए तुलसीदास जी द्वारा यह संकेत दिया गया है कि केवल भगवन्नाम के आश्रय मात्र से यह स्वानुभूति सहज संभव है कि राम ब्रह्म हैं और उनके जन्म व कर्म दिव्य हैं। यही जीवन का श्रेय और परमार्थ है।

आदमी जब पत्तल में खाना खाता था, मेहमान को देखकर वह हरा हो जाता था। स्वागत में पूरा परिवार बिछ जाता था। बाद में जब वह मिट्टी के बर्तन में खाने लगा रिश्तों को जमीन से जुड़कर निभाने लगा। जब पीतल के बर्तन उपयोग में लेता था, रिश्तों को साल छः महीने में चमका लेता था, लेकिन जब से काँच के बर्तन बरतने लगे एक हल्की सी चोट में बिखरने लगा। अब बर्तन, थर्मोकोल पेपर के इस्तेमाल होने लगे। सारे संबंध भी यूज एंड थ्रो होने लगे।

जनकसुता जग जननि जानकी

श्रीमती रीता कश्यप, दिल्ली-110092। फोन : 9958622992

भारतीय नारी के आदर्शों की प्रतिमूर्ति सीता जी मात्र एक नारी ही नहीं, गुणों की मूर्ति रूप हैं। अनन्य सुन्दरी, पतिव्रता, कर्तव्यपरायणा, सुशीला, सौम्या, धैर्यवान, साहसी और सहृदया सीता जी को बनाने में ब्रह्मा ने मानो अपना सारा कौशल लगा दिया हो –

जनु बिरंचि सब निज निपुनाई। बिरचि बिस्व कहँ प्रगटि दिखाई।।

(1/230/6)

मिथिला की राजदुलारी और भगवान राम की अर्धांगिनी देवी सीता जी का रूप अलौकिक था –

देखि सीय सोभा सुखु पावा। हृदयँ सराहत बचनु न आवा।।

(1/230/5)

सीता स्वयंवर के समय सीता जी के रूप सौंदर्य का वर्णन गोस्वामी तुलसीदास जी ने इस प्रकार किया है –

सोह नवल तनु सुंदर सारी। जगत जननि अतुलित छबि भारी।।

(1/248/2)

जयमाला हाथों में लिए सखियों के बीच जाती हुई जानकी जी इस प्रकार लग रही थीं –

सखिन्ह मध्य सिय सोहति कैसें। छबिगन मध्य महाछबि जैसे।।

(1/264/1)

सीता जी के जन्म की कहानी भी बड़ी अद्भुत है। कहते हैं एक बार मिथिला के राजा जनक के राज्य में भीषण अकाल पड़ा। ऋषियों की सलाह से उन्होंने जल वृष्टि के लिए एक यज्ञ का अनुष्ठान किया। इसी अनुष्ठान के अन्तर्गत जब वे एक खेत में हल चला रहे थे, तब एक जगह उनके हल का अग्रभाग एक कलश से टकरा कर रुक गया। कलश को भूमि से निकाला गया तो उसमें एक सुन्दर कन्या थी। निःसन्तान राजा जनक ने उस कन्या को ईश्वर का वरदान समझ कर अपनी पुत्री की भाँति पाला। हल के अग्रभाग से टकराने के कारण इस कन्या का नाम सीता रखा, क्योंकि हल के अग्र भाग को सीत कहा जाता है। सीता को एक अलौकिक देवी के रूप में पूजा जाता है। तुलसीदास जी ने सीता की स्तुति करते हुए लिखा –

जासु अंस उपजहिं गुनखानी। अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी।।

(1/148/3)

पतिव्रता सीता जी पग–पग पर अपने कर्तव्य से भली–भाँति परिचित थीं। वे एक आदर्श पत्नी का धर्म जानती थीं –

पति अनुकूल सदा रह सीता। सोभा खानि सुसील बिनीता।।

(7 / 24 / 3)

पति के राजतिलक की तैयारियों के बीच अचानक वन जाने के आदेश को सुनकर वे तुरन्त पति की अनुगामिनी बनने का निर्णय ले लेती हैं, क्योंकि वे जानती हैं कि एक पत्नी का सच्चा सुख पति के चरणों में ही है। ऐसे में श्रीराम उन्हें वन के कठिन जीवन के बारे में बताते हुए रोकने का प्रयास करते हैं। इतना ही नहीं माता कौसिल्या, गुरु वसिष्ठ, मन्त्री सुमन्त्र सभी उन्हें तरह तरह से समझाने और वन जाने से रोकने का प्रयत्न करते हैं, लेकिन सीता जी आदरपूर्वक सबसे क्षमा माँगते हुए पति के साथ जाने के लिए अपना पक्ष रखती हैं –

मैं पुनि समुझि दीखि मन माहीं। पिय बियोग सम दुखु जग नाहीं।।
प्रभु करुनामय परम बिबेकी। तनु तजि रहति छाँह किमि छेकी।।
प्रभा जाइ कहँ भानु बिहाई। कहँ चंद्रिका चंदु तजि जाई।।

(2 / 64 / 7 तथा 2 / 97 / 5–6)

पति के प्रति ही नहीं, ससुराल पक्ष के प्रति अपने पुत्रवधू के कर्तव्य का भी वे भली–भाँति निर्वाह करती थीं। परम प्रतापी राजा श्रीराम की पत्नी, सीता महल में इतने दास–दासियों के होते हुए भी घर–परिवार की पूरी व्यवस्था पर नियंत्रण रखते हुए गृह कार्य स्वयं करती थीं। एक मात्र कौसिल्या की ही नहीं, बल्कि अपनी तीनों सासों की सेवा करती थीं –

जद्यपि गृहँ सेवक सेवकिनी। बिपुल सदा सेवा बिधि गुनी।।
निज कर गृह परिचरजा करई। रामचंद्र आयसु अनुसरई।।
कौसल्यादि सासु गृह माहीं। सेवइ सबन्हि मान मद नाहीं।।

(7 / 24 / 5–6 एवं 8)

सीता जी का स्वभाव इतना सौम्य, सरल और मधुर था कि हर किसी का मन मोह लेता था। अपने तो अपने शत्रु भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहते थे। अशोक वाटिका में सीता को भयभीत करने और मजबूर करने के लिए रखी गई राक्षसियाँ भी उनसे स्नेह करने लग गई थीं। त्रिजटा नामक राक्षसी का तो वे माँ की भाँति सम्मान करती थीं और त्रिजटा भी उन्हें अपनी पुत्री मानकर समय–समय पर धैर्य बंधाती और उनका ध्यान रखती थी –

त्रिजटा सन बोलीं कर जोरी। मातु बिपति संगिनि तैं मोरी।।

(5 / 12 / 1)

इतना ही नहीं रावण के साथ अशोक वाटिका में आई उसकी पत्नी मंदोदरी भी सीता जी के व्यक्तित्व से इतनी प्रभावित थीं कि वे क्रोध में आए रावण को सीता पर वार करने से रोकती हैं, जबकि सौतिया दाह

के कारण वह चाहतीं तो क्रोधाग्नि में घी का काम करते हुए सीता जी का वध करवा सकती थीं –

सुनत बचन पुनि मारन धावा। मयतनयाँ कहि नीति बुझावा॥

(5/10/7)

इतना ही नहीं, मंदोदरी अकेले में कई बार अपने पति रावण को समझाती हैं कि सीता को आदरपूर्वक श्रीराम को सौंपने में ही हम सब की भलाई है –

तव कुल कमल बिपिन दुखदाई। सीता सीत निसा सम आई॥
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें॥

(5/36/9–10)

यह सीता जी के स्वभाव की सरलता ही थी कि वह साधु वेश में आए रावण के कपट को पहचान नहीं पाईं और यह उनके संस्कार ही थे कि द्वार पर आया साधु बिना भिक्षा के न लौट जाए। यही कारण था कि अपनी सुरक्षा की चिन्ता किए बिना वह रावण को यथा संभव भिक्षा देने कुटिया से निकल आती हैं।

सीता जी के स्वभाव की एक अन्य विशेषता विचारणीय है। महलों में पली बढ़ी राजकुमारी ठीक पति के राजतिलक के समय वन प्रस्थान की बात सुनकर विचलित नहीं होतीं। वे न तो अनर्गल प्रलाप करती हैं, न किसी से कोई शिकायत ही करती हैं और न ही किसी पर दोषारोपण ही करती हैं, बल्कि चुपचाप अपने कर्तव्य–पथ पर चलने के लिए तत्पर हो जाती हैं। महलों का सुख छोड़ कर वन में एक पर्णकुटी में रहते हुए घास–फूंस की शय्या पर सोना, उपलब्ध कच्चे पके फल खाना, बल्कल धारण करना उनके अद्‌भुत धैर्य का परिचायक है। अपनी इस स्थिति के लिए किसी व्यक्ति विशेष को दोष देना तो दूर, क्रूर नियति पर भी उन्होंने आँसू नहीं बहाए।

सीता जी अद्‌भुत धैर्य के साथ–साथ साहस और दृढ़ता की भी स्वामिनी हैं। रावण की लंका में राक्षस राक्षसियों के बीच रहकर भी वे अपना धैर्य नहीं खोतीं और न ही रावण के समक्ष समर्पण ही करती हैं। वे रावण के लिए प्रलोभनों को अस्वीकारती ही नहीं, बल्कि उसे दुत्कारने से भी नहीं हिचकतीं –

सठ सूनें हरि आनेहि मोही। अधम निलज्ज लाज नहिं तोही॥

(5/9/9)

उनके स्वभाव में नारी सुलभ कोमलता भी है। स्वयंवर से पहले मन्दिर जाती हुई सीता जी श्रीराम को देखकर मोहित हो जाती हैं, किन्तु अपने को पिता के प्रण से बँधा समझकर बेबस हो जाती हैं, पर उन्हें पति रूप में पाने की कामना से वह माँ गौरी से प्रार्थना भी करती हैं –

धरि बड़ि धीर रामु उर आने। फिरी अपनपउ पितुबस जाने॥
मोर मनोरथु जानहु नीकें। बसहु सदा उर पुर सबहीं कें॥

(1/234/8 तथा 1/236/3)

वन में स्वर्ण मृग को देखकर उसे पाने को लालायित हो जाती हैं और पति से उसे पकड़ने का आग्रह भी करती हैं। मारीच के कपट से अनजान वह पति पर आए संकट का विचार कर लक्ष्मण के समझाने पर भी विचलित हो उठती हैं। लक्ष्मण को भाई श्रीराम की मदद के लिए जाने पर मजबूर करती हैं। ऐसे में वह लक्ष्मण से कटु वचन तक कहने से भी नहीं हिचकतीं, क्योंकि अपने पति पर आए संकट को भांप कर पत्नी का विचलित हो जाना स्वाभाविक है –

मरम बचन जब सीता बोला। हरि प्रेरित लछिमन मन डोला।।

(3 / 28 / 5)

सीता जी के इन्हीं गुणों ने हर भारतीय को प्रभावित किया है। यही कारण है कि आज युगों बाद भी हर पिता यदि सीता जैसी पुत्री पाना चाहता है तो हर पति सीता जैसी पत्नी की चाह करता है। अगर हर सास–ससुर सीता जैसी पुत्रवधू चाहते हैं, हर देवर सीता जैसी भाभी की चाह करता है तो हर सेवक सीता जैसी स्वामिनी का सपना देखता है। स्वयं सीता जी के पिता राजा जनक अपनी पुत्री के इन्हीं गुणों के कारण अपने को धन्य मानते हुए उसकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं –

पुत्रि पबित्र किए कुल दोऊ। सुजस धवल जगु कह सबु कोऊ।।

(2 / 287 / 2)

तुलसीदास जी ने अपनी सिद्धहस्त लेखनी में सीता जी की अग्नि–परीक्षा के वृत्तान्त को एक नया रूप दिया है। यहाँ सीता अग्नि–परीक्षा नहीं देतीं, बल्कि पंचवटी प्रवासकाल में राम जी अपनी लीला के लिए सीता को अग्नि में रखते हैं, जिसे बाद में अग्नि से प्रकट करते हैं –

सीता प्रथम अनल महुँ राखी। प्रगट कीन्हि चह अंतर साखी।।

(6 / 108 / 14)

हालांकि सर्वविदित है कि सीता जी पुनः वनवास में भेजी जाती हैं और वहाँ वाल्मीकि आश्रम में वे दो पुत्रों लव और कुश को जन्म देती हैं, लेकिन श्रीरामचरित को तुलसीदास जी ने राम कथा को सीता जी के दो पुत्रों के जन्म की सूचना मात्र देकर रामराज्य के सुखान्त वर्णन पर समाप्त कर दिया है –

दुइ सुत सुंदर सीताँ जाए। लव कुस बेद पुरानन्ह गाए।।

(7 / 25 / 6)

अपने इन्हीं अलौकिक गुणों के कारण जनक दुलारी और मर्यादा पुरुषोत्तम राजाराम की अर्धांगिनी सीता जी एक देवी के रूप में घर–घर में पूजी जाती हैं –

जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।

(1 / 18 / 7)

क्यों सुख-बीज न बोता

सरल शास्त्री, फोन : 9311384212

अखिल सृष्टि का कर्म–बीज सब
कर्म–बँधनों जकड़े।
विवश पड़े सब जीव जगत में
कर्म–चरण को पकड़े।।

कर्मों की गति बड़ी कठिन रे
ज्ञानी समझ न पाते।
कर्म–शृंखलाबद्ध जीव भव–
सागर टक्कर खाते।।

जैसा कर्म करे जो मानव
वह वैसा फल पाता।
यह सिद्धांत अटल जग, सबका
खुला कर्म का खाता।।

कर्म–परे जग–संचालक भी
कर्म–बँधा सा लगता।
भले कहें नर–लीला उसकी
किन्तु विवश सा लगता।।

यह धरती है यहाँ राम भी
रह न सके बेखटके।
जीवन में लगते रहते हैं
हर प्राणी को झटके।।

राजमहल में रहने वाले
भवाटवी में भटके।
हा! दुख पर दुख झेले वन में
औ' झटके पर झटके।।

सीता–हरण विरह में व्याकुल
रोते वन–वन भटके।
हाय कहाँ कैसी होगी वह
प्राण कंठ में अटके।।

खोज रहे थे प्राणप्रिया को
शूल–चुभन पद सहते।
टपक रहे थे श्रम–कण तन से
पथरीले पथ चलते।।

रण में देख अचेत बंधु को
अश्रु नयन से फूटे।
'सरल' राम तक के जीवन में
हा! दुख पर दुख टूटे।।

फिर प्राणी तू किस गिनती में
क्या तू ने यह सोचा।
फँसा पंच विषयों में इत, उत
दुख–चीतों ने नोचा।।

भाग्य–बाँचने वालों ने जब
बतलाया विधि–लेखा।
लिखी न विधि ने सुख–लिपि भाल
न, खींची हस्त न रेखा।।

यह भव–सागर पारावार न
उमड़ रहा दुख इसमें।
'सरल' व्यर्थ ही खोज रहा तू
सुख न लेश भी जग में।।

और सहा है, यह भी सह ले
सहने में ही सुख है।
अपना सुख देकर के ले ले
पर का जितना दुख है।।

जगत–थपेड़ों से व्याकुल हो
सीस पकड़ क्यों रोता।
नवल उमंगें भर मानस में
क्यों सुख–बीज न बोता।।

तेरे भाग्य न किंचित सुख तो
क्यों रोता नर होकर।
हृदय धैर्य धर कर्म–मार्ग चल
मार शोक को ठोकर।।

कर अपना कर्तव्य–कर्म नर
त्याग कर्म–फल आशा।
निज कर्तव्य निभाने से ही
टूटेगा भव–पाशा।।

पति समझदार हो तो मकान जल्दी बन जाता है। पत्नी समझदार हो तो घर जल्दी बन जाता है। दोनों ही समझदार हों तो घर मन्दिर बन जाता है। बच्चे भी समझदार हों तो घर स्वर्ग बन जाता है। अगर माँ-बाप साथ हों तो घर स्वर्ग से भी सुन्दर बन जाता है।

धरम सेतु पालक तुम्ह ताता

श्री रामजन्म सिंह, आजमगढ़ (उ. प्र.)। फोन : 9839453851

अहल्योद्धार के पश्चात् श्रीराम जनकपुरी में महर्षि विश्वामित्र के पास बैठे हुए हैं। लक्ष्मण जी के हृदय में नगर दर्शन की उत्कण्ठा है, पर वे संकोच और भय के कारण कह नहीं पाते। उन्होंने प्रभु की ओर देखा, अन्तर्यामी राम बात समझ गए और वे विश्वामित्र जी की ओर देखते हैं। महर्षि ने प्रभु से पूछा – क्या आप कुछ कहना चाहते हैं? श्रीराम ने कहा "गुरुदेव, लक्ष्मण नगर देखना चाहते हैं, यदि आप आज्ञा दें तो मैं इन्हें नगर दिखा लाऊं। यह बात सुनते ही विश्वामित्र राम को एक उपाधि देते हैं – तुम तो धर्म सेतु के संरक्षक हो। इससे मिलती जुलती उपाधि गुरु वसिष्ठ द्वारा चित्रकूट में श्रीराम जी को दी गई थी –

धर्म सेतु करुनायतन कस न कहहु अस राम।
लोग दुखित दिन दुइ दरस देखि लहहुँ बिश्राम॥

(2 / 248)

वस्तुतः तुम तो धर्म के मूर्तिमान सेतु हो। सेतु पुल को कहते हैं। पुल दो किनारों को मिलाता है, जोड़ता है। धर्म का भी यही कार्य है। यहाँ राम की सेतु वृत्ति पर विचार करना होगा। चाहे भावना का क्षेत्र हो, चाहे विचार का क्षेत्र हो, चाहे व्यवहार का क्षेत्र हो, जहाँ भी दूरी है श्रीराम का व्यक्तित्व सबके बीच सेतु बनकर मिलाने का कार्य कर रहा है। श्रीरामचरितमानस के कुछ ऐसे प्रसंगों का वर्णन इस लेख में करने का प्रयास किया है, जहाँ श्रीराम ने दो विचार–धाराओं के बीच सेतु बनाने का कार्य किया है।

1. समुद्र में सेतु निर्माण तो बाद में हुआ, इससे पूर्व श्रीराम मंत्रिमण्डल के सामने प्रश्न रखते हैं कि समुद्र को कैसे पार किया जाये। विभीषण हाल ही में मंत्रिमण्डल में शामिल हुए थे, उन्होंने कहा –

प्रभु तुम्हार कुलगुर जलधि कहिहि उपाय बिचारि।
बिनु प्रयास सागर तरिहि सकल भालु कपि धारि॥

(5 / 50)

श्रीराम ने कहा, मित्र! तुमने सुन्दर उपाय बताया, अगर देव सहायक होगा तो सफलता मिलेगी। इसी बीच लक्ष्मण बोल पड़े। श्रीराम के सामने दो भाई हैं – एक अपना और दूसरा शत्रु का। अगर विभीषण देववाद के समर्थक हैं तो लक्ष्मण पुरुषार्थवादी हैं। यहाँ दो व्यक्ति आमने–सामने हैं। यहाँ पर राम की सेतु–वृत्ति पर ध्यान दें। राम दोनों के मत का समन्वय करना जानते हैं। श्रीराम समुद्र के किनारे अनशन करने बैठ गए, मात्र तीन दिन के लिए इसके बाद बोले –

बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति॥

(5 / 57)

राम सेतु हैं, सेतु का काम किसी एक के पक्ष में नहीं होता। वे लक्ष्मण से बोले – **"लछिमन बान सरासन आनू"** चौथे दिन यह बात कही, सात दिनों का बँटवारा अच्छा हुआ। 3 दिन एक ओर 3 दिन दूसरी

ओर। राम ने सोचा यदि समुद्र सुखा दें तो इन जलचरों का क्या होगा? समुद्र भयभीत होकर श्रीराम के सामने आ जाता है और सेतु बनाने का सुझाव देता है।

2. मानस में बताया गया है कि राम का नाम, रूप, चरित्र, कथा सभी सेतु हैं। जाम्बवंत जी ने कहा है–

नाथ नाम तव सेतु नर चढ़ि भवसागर तरहिं।।

(6 / मंगलाचरण)

श्रीराम जब जाकर पुल पर खड़े हुए तो समुद्र के सभी जलचर ऊपर आ गए। लंका के युद्ध में ये जलचर सहायक बने। वे पुल का कार्य कर गए। यह ईश्वरीय सन्देश है कि पहले पुरुषार्थ का पुल बनाओ उसके बाद कृपा का पुल हम बना देंगे। यहां लक्ष्मण और विभीषण के बीच राम ने सेतु का कार्य किया।

3. गीतावली में एक प्रसंग है लक्ष्मण को शक्ति लगी, वह विभीषण को लक्ष्य कर के मेघनाद ने चलाई थी। उस समय लक्ष्मण ने विभीषण को पीछे धकेल दिया और शक्ति अपनी छाती पर ले ली। धन्य हो लक्ष्मण। लक्ष्मण–विभीषण के विचारों की दूरी मिट गई। इस प्रकार यहाँ भी सेतु की तरह व्यवहार हुआ।

4. गुरु वसिष्ठ और विश्वामित्र में बराबर संघर्ष होता रहा, दोनों महान तपस्वी रहे। श्रीराम ने दोनों को गुरु बनाया। राम विवाह के बाद जब वे अयोध्या लौटे तो उक्त दोनों महात्मा साथ–साथ अयोध्या आए। दोनों में विवाद था। विश्वामित्र चाहते थे, वसिष्ठ एक बार उन्हें ब्रह्मर्षि कह दें। विवाह के दूसरे दिन सभा में गुरु वसिष्ठ कथा सुनाने वाले आसन पर बैठे। लोगों ने सोचा कथा विवाह के सम्बन्ध में होगी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ।

मुनि मन अगम गाधिसुत करनी। मुदित बसिष्ट बिपुल बिधि बरनी।।

(1 / 359 / 6)

विश्वामित्र का चरित्र सुनाने लगे। बोले विवाह का पूरा श्रेय विश्वामित्र को ही है। विश्वामित्र की भूरि–भूरि प्रशंसा होने लगी। सारी अयोध्या में आनंद छा गया। दोनों महर्षियों की दूरी मिट गई। दो गुरुओं की जोड़ी ने श्रीराम को आशीर्वाद दिया। सचमुच श्रीराम का सेतुत्व अनोखा है।

5. राम का व्यक्तित्व ही सेतु है। राम विवाह के समय महाराज दशरथ और जनक का मिलन केवल दो राजाओं का ही मिलन नहीं है। दोनों के सिद्धान्त एक दूसरे से मिले हैं। गोस्वामी जी के समय द्वैत–अद्वैत का विवाद था। निराकार–साकार का भी विवाद था। एक पक्ष कहता ईश्वर निराकार है, दूसरा कहता ईश्वर साकार है। द्वैत–अद्वैत का जितना सुन्दर सामंजस्य जनकपुरी में हुआ उतना अन्यत्र नहीं। महाराज दशरथ द्वैतवादी हैं और जनक (विदेह) अद्वैतवादी हैं। जनक निराकारवादी हैं और दशरथ साकारवादी हैं, पर श्रीराम के कारण दोनों संबन्धी बन गए। रामचरितमानस में निर्गुण–सगुण और निराकार–साकार का समन्वय दिखाया गया है। दशरथ जी भेदवादी हैं, इसलिए उन्हें स्वर्ग जाना पड़ा। भेदवादी को मोक्ष नहीं मिलता है।

सगुनोपासक मोच्छ न लेहीं। तिन्ह कहुँ राम भगति निज देहीं।।

(6 / 112 / 7)

6. रामचरितमानस में महर्षि लोमश और काकभुशुण्डि में अद्वैत और द्वैत का विवाद रहा। लोमश अद्वैतवादी हैं, उन्हें क्रोध आ गया, काकभुशुण्डि मनन करते हैं कि यदि अद्वैत सत्य है तो क्रोध कैसे? क्रोध तो दूसरे पर आता है।

क्रोध कि द्वैतबुद्धि बिनु द्वैत कि बिनु अग्यान।
मायाबस परिछिन्न जड़ जीव कि ईस समान॥

(7/111 'ख')

द्वैत–अद्वैत की टकराहट विद्वेष की ओर बढ़ रही थी, पर सामंजस्य यह है कि जिसे शाप मिला उसके मन में कोई ग्लानि नहीं, वे कौवा होकर उड़ चले, जिसने शाप दिया, उसके मन में पश्चात्ताप का उदय हुआ। इस प्रकार दोनों का सामंजस्य होता है। काकभुशुण्डि लौट कर आते हैं और गुरु के रूप में लोमश को वरण करते हैं। यहाँ निराकार–साकार और द्वैत–अद्वैत का सामंजस्य होता है।

7. जनकपुर में एक सखी ने व्यंग्य किया कि जब विवाह से पूर्व बिना निमंत्रण के दोनों भाई सीता जी को लेने आ गए तो विवाह के बाद कितनी बार आएंगे। पता नहीं, ऐसा कोई विवाह नहीं हुआ, जिसमें दूल्हा बारात पहुँचने से पहले ससुराल में आकर टिक जाये। यदि इसे व्यापक अर्थ में कहा जाये तो यह कह सकते हैं कि भक्ति आ गई तो ज्ञान का आगमन होना ही है। भगवान राम अखण्ड ज्ञान है, अगर जीवन में भक्ति देवी आ गई तो फिर ज्ञान–वैराग्य को निमंत्रण देने की आवश्यकता नहीं। लक्ष्मण मूर्तिमान वैराग्य हैं। राम अर्थात योगी जिसमें रमण करते हैं। राम विवाह के माध्यम से सबका सामंजस्य किया गया है।

8. लंका विजय के बाद श्रीराम पुष्पक विमान से कुछ बन्दरों को लेकर अयोध्या आए। श्रीराम के सेतु का एक दृश्य देखें। विमान से उतरते ही सामने गुरु वसिष्ठ को देखा और गुरु जी को देखते ही प्रभु ने धनुष–बाण रख दिया और गुरु के चरणों में साष्टांग प्रणाम किया। गुरु जी ने उन्हें उठाकर हृदय से लगा लिया। बंदर तो सभ्यता आदि से शून्य थे और यहाँ के वातावरण में इस दृश्य को देखकर भौंचक्के रह गए, क्योंकि इतने दिनों तक बन्दरों ने श्रीराम के साथ मनमाना व्यवहार किया था – "प्रभु तरुतर कपि डाल पर," प्रभु नीचे बैठे हैं तो ये जाकर डाल पर बैठ गए। जब वानरों ने अयोध्या का शिष्टाचार देखा तो घबराए। श्रीराम ने उनकी घबराहट को देखकर सभी बंदरों को बुलाया। अयोध्यावासी हँस रहे थे कि कैसे हैं श्रीराम के मित्र। गोस्वामी जी ने वानरों के लिए सखा शब्द का प्रयोग किया –

पुनि रघुपति सब सखा बोलाए। मुनि पद लागहु सकल सिखाए॥

(7/8/5)

प्रभु ने बंदरों को सिखाया कि चरणों में गिरकर गुरु जी को प्रणाम करो। बन्दर प्रणाम करना भी नहीं जानते थे, उन्हें सिखाया गया। गुरु वसिष्ठ और बंदरों का मिलन हुआ अर्थात् मनुष्य और पशु के बीच भी श्रीराम सेतु बन गए। श्रीराम दोनों को एक–दूसरे का परिचय देते हैं –

गुर बसिष्ट कुलपूज्य हमारे। इन्ह की कृपाँ दनुज रन मारे॥

(7/8/6)

लेकिन भगवान राम ने केवल गुरुदेव को ही श्रेय नहीं दिया। बन्दरों को अपना मित्र बताया, लेकिन उनका इतना ही परिचय नहीं है –

ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भए समर सागर कहँ बेरे।।

(7/8/7)

युद्ध तो समुद्र की तरह था, समुद्र को पार करने के लिए जहाज और मल्लाह दोनों की आवश्यकता होती है। दोनों मिल गए। आप की कृपा बन गई मल्लाह, आप कृपालु होकर बन गए उस नौका को खेने वाले और ये बन्दर बन गए जहाज। आप दोनों ने मिलकर हमें पार उतार दिया। श्रीराम मनुष्य और पशु के बीच भी सेतु बनकर दोनों का मिलन करा देते हैं।

9. श्रीरामचरितमानस भी समाज में एक सेतु के समान है। इस महाकाव्य ने सेतु बनकर बुध और जन को मिला दिया –

बुध बिश्राम सकल जन रंजनि। रामकथा कलि कलुष बिभंजनि।।

(1/31/5)

श्रीराम के दादा परदादा के नाम की वंशावली

1. ब्रह्मा जी से मरीचि हुए, 2. मरीचि के पुत्र कश्यप हुए, 3. कश्यप के पुत्र विवस्वान थे, 4. विवस्वान के वैवस्वत मनु हुए। वैवस्वत मनु के समय जल प्रलय हुआ था, 5. वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से एक का नाम इक्ष्वाकु था, इक्ष्वाकु ने अयोध्या को अपनी राजधानी बनाया और इस प्रकार इक्ष्वाकु कुल की स्थापना की। 6. इक्ष्वाकु के पुत्र कुक्षि हुए, 7. कुक्षि के पुत्र का नाम विकुक्षि था, 8. विकुक्षि के पुत्र बाण हुए, 9. बाण के पुत्र अनरण्य हुए, 10. अनरण्य के पृथु हुए, 11. पृथु से त्रिशंकु का जन्म हुआ, 12. त्रिशंकु के पुत्र धुन्धुमार हुए, 13. धुन्धुमार के पुत्र का नाम युवनाश्व था, 14. युवनाश्व के पुत्र मान्धाता हुए, 15. मान्धाता से सुसन्धि का जन्म हुआ, 16. सुसन्धि के दो पुत्र हुए - ध्रवसन्धि एवं प्रसेनजित, 17. ध्रवसन्धि के पुत्र भरत हुए, 18. भरत के पुत्र असित हुए, 16. असित के पुत्र सगर हुए, 20. सगर के पुत्र का नाम असमंजस था, 21. असमंजस के पुत्र अंशुमान हुए, 22. अंशुमान के पुत्र दिलीप हुए, 23. दिलीप के पुत्र भगीरथ हुए, भगीरथ ने ही गंगा को पृथ्वी पर उतारा था, भगीरथ के पुत्र कुकुत्स्थ थे, 24. कुकुत्स्थ के पुत्र रघु हुए, रघु के अत्यंत तेजस्वी और पराक्रमी नरेश होने के कारण उनके बाद इस वंश का नाम रघुवंश हो गया, तब से श्रीराम के कुल को रघुकुल भी कहा जाता है। 25. रघु के पुत्र प्रवृद्ध हुए, 26. प्रवृद्ध के पुत्र शंखण थे, 27. शंखण के पुत्र सुदर्शन हुए, 28. सुदर्शन के पुत्र का नाम अग्निवर्ण था, 29. अग्निवर्ण के पुत्र शीघ्रग हुए, 30. शीघ्रग के पुत्र मरु हुए, 31. मरु के पुत्र प्रशुश्रुक थे, 32. प्रशुश्रुक के पुत्र अम्बरीष हुए, 33. अम्बरीष के पुत्र का नाम नहुष था, 34. नहुष के पुत्र ययाति हुए, 35. ययाति के पुत्र नाभाग हुए, 36. नाभाग के पुत्र का नाम अज था, 37. अज के पुत्र दशरथ हुए, 38. दशरथ के चार पुत्र - राम, भरत, लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न हुए।

इस प्रकार ब्रह्मा की उनतालीसवीं (39वीं) पीढ़ी में श्रीराम का जन्म हुआ।